B.A. III (Hons) Paper VII

Ancient history
Sub- भारतीय धर्म . Paper VII

वैदिक धर्म

(1) संस्कृत में वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है, क्योंकि यह ज्ञानार्थक विद् धातु से निष्पन्न होता है। अतः वेद शब्द किसी ग्रंथ का वाचक न होकर सम्पूर्ण ज्ञान का वाचक है। ज्ञान किसी भी विषय का हो सकता है सभी भौतिक तथा आध्यात्मिक विषय ज्ञान के विषय हैं, अर्थात् ज्ञेय हैं तथा समस्त ज्ञेय का आधार ही वेद है। इसी कारण प्रायः सभी विषयों का वर्णन वेद में उपलब्ध होता है। मनुष्य जाति के प्राचीनतम इतिहास, सामाजिक नियम सदाचार, दर्शन कला धर्म आदि ज्ञान का आधार वेद ही है। इस अलौकिक ज्ञान का एकमात्र साधन वेद ही है। परन्तु वेद शब्द का सर्वमान्य अर्थ ज्ञान है। इस प्रकार वेद शब्द का ज्ञान या विद्या का वाचक है।

धर्म :→

धर्म का वेदों में दो प्रकार से वर्णन है। बहिर्मुखी धर्म और अन्तर्मुखी धर्म। बहिर्मुखी धर्म प्रवृत्ति लक्षण धर्म भी कहलाता है तथा अन्तर्मुखी धर्म निवृत्ति लक्षण धर्म कहलाता है। वेद के पूर्व भाग में बहिर्मुखी धर्म का लक्षण है तथा उत्तरभाग (उपनिषद्) निवृत्ति लक्षण या अन्तर्मुखी धर्म का वर्णन है पहले का संबंध कर्मकाण्ड से है; दूसरे का संबंध ज्ञान काण्ड से है। पहले से विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा अर्चना का विधान है, दूसरे में आत्मा और परमात्मा का वर्णन है। इस प्रकार वेद से उपनिषद् की ओर अग्रसर

2. होते ही धर्म ब्राह्मण देवी-देवताओं को छोड़कर आत्मन तत्व की ओर बढ़ने लगते हैं। आत्मा और विश्वात्मा को ~~छोड़~~ ~~आत्मन तत्व की ओर बढ़ने लगते हैं~~ एक मान लेने पर किसी देवी-देवताओं की पूजा प्रार्थना की आवश्यकता नहीं दिखलाई देती। उपनिषद् में बतलाया गया है कि किसी देवता की कृपा की अपेक्षा मत करो। जिस देवता की उपासना करते हो - वह सत्य नहीं। इससे स्पष्ट है कि निवृत्ति लक्षण धर्म प्रवृत्ति लक्षण से श्रेष्ठ है।

वैदिक देव →

वरुण:- वरुण को वैदिक देवताओं में अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है। ये देवता आकाश के तारागणों को तथा सभी जीवों को आच्छादित देते हैं। वरुण को विश्व का निरीक्षक करनेवाला देवता समझा जाता है। वैदिक मन्त्रों में बतलाया गया है कि सूर्य उनके नेत्र हैं, वायु श्वास है, आकाश वस्त्र है। उनकी आज्ञा से ही नदियाँ बहती हैं। वरुण ऋतुओं ~~ऋतियों~~ के स्वामी माने जाते हैं जिससे ~~ऋतु~~ ऋतु का माह का दिन और रात्रि का विधान करते हैं। वरुण आकाश में सूर्य को बादल तथा कुहर से आवृत कर देते हैं। बादल जल बिन्दुओं की वर्षा से धरती को मंगलमयी मधुमयी तथा गोधमयी बना देते हैं।

इन्द्र:- इन्द्र का स्थान ऋग्वेद के देवताओं में संभवत सबसे महत्वपूर्ण है केवल वरुण

ही इनकी समता कर पाते हैं। इनकी स्तुति में ऋग्वेद के लगभग एक-चतुर्थांश सूक्त हैं। इन्द्र के शरीर का विपुल-वर्णन किया गया है। इनका शरीर विशाल है इन्द्र जन्म समुद्र और मेघ से है। कभी-कभी द्यु-लोक से वज्र ध्वनि के साथ, बिजली की कड़क के साथ नीचे उतार देता है। वैदिक देवता, जैसे कि ब्लूमफील्ड ने कहा है, "पकड़े गए 'व्यक्तित्व' का प्रतिनिधित्व करते हैं किन्तु मानवाकृति-धारी देवता भी असंस्कृत रूप में ही देवहारे हैं। इनके हाथों और पांवों की कल्पना भी मनुष्यों के समान की गई है। उन्हें शारीरिक आकृति प्रदान की गई।

यज्ञ:- यज्ञ ईश्वर के प्रति प्रेम की गहराई निहित है। यज्ञ वैदिक धर्म की दूसरी श्रेणी है। प्रथम श्रेणी में केवल सरल प्रार्थना का ही विधान था। त्रेतायुग यज्ञों का, द्वापर में पूजा का, कलियुग में स्तुति एवं प्रार्थना का विधान है। यह मत विष्णुपुराण के मत के साथ पूर्णरूप से मिलता है। यज्ञ सम्बन्धी नियमों का निर्माण त्रेतायुग में हुआ। चाहे हम युगों के विभाग के विषय में भले ही सहमत न हो सकें, किन्तु धार्मिक प्रक्रियाओं की प्रगति स्वभाव से यज्ञ की ओर यज्ञ से पूजा की ओर और पूजा से स्तुति एवं प्रार्थना की ओर यथार्थ घटनाओं के ऊपर अवश्य आधारित है।

मूर्तिपूजक धर्म:— वैदिक धर्म मूर्तिपूजक धर्म प्रतीत नहीं होता। उस समय देवताओं के मन्दिर नहीं थे। मनुष्य बिना किसी दूसरे की मध्यस्थता के देवताओं से सीधा सम्बन्ध रखते थे। देवताओं को अपने उपासकों का मित्र समझा जाता था

4. मनुष्य और देवताओं के मध्य उस समय अत्यन्त घनिष्ठ मित्र का नाता था। धर्म का जीवन के समस्त भागों में आधिपत्य था। ईश्वर के ऊपर लोग पूर्ण रूपेण निर्भर करते थे। जीवन की साधारण-सी आवश्यकताओं के लिए भी लोग प्रार्थना करते थे। "आज हमें अपना दैनिक भोजन दो" यह वैदिक आर्य के भाव के अनुकूल प्रार्थना थी। जीवन के सामान्य भोगों के लिए भी ईश्वर के ऊपर निर्भर करनेवाले भक्त की सच्ची भक्ति का यह नमूना है।

मृतात्मा:- की स्तुति:-

वैदिक युग में पितरों को सम्बोधन करने का संकेत मिलते हैं पितर वे सौभाग्यशाली मृतात्मा हैं जो स्वर्ग में निवास करते हैं वैदिक मन्त्रों में देवताओं के साथ-साथ उनकी भी स्तुति की जाती है। यह कल्पना की जाती है कि वे अदृश्य आत्माओं के रूप में प्रार्थनाओं एवं यज्ञों में दी गई आहुतियों को ग्रहण करने के लिए आते हैं। इस सामाजिक परम्परा को पितृपूजा के रूप में श्रद्धा-भाव से देखा जाता है। वेदों के विधानों ऐसे भी हैं जिनका विश्वास है कि ऋग्वेद के सूक्तों में स्वर्गीय पूवजों की पवित्र आत्माओं का उद्धार करके उत्तर क्रिया कर्म सम्बन्धी आहुतियों एवं उपहार देने का कोई विधान नहीं है।

वैदिक धर्म के विरुद्ध जो एक आक्षेप साधारणतः किया जाता है वह यह कि वेदों में पाप के प्रति अनिच्छा का अभाव है। यह एक भ्रममूलक मत है। वेदों के अन्दर ईश्वर से विमुख होने को ही पाप-(अधर्म) माना गया है। पाप के विषय में जो वैदिक-धारणा है वह हीबू सिद्धान्त के सदृश है। ईश्वरेच्छा

की प्रबल धर्म था। पल्लव राजा महेन्द्र वर्मन पहले तो जैन धर्मावलम्बी था पर बाद में वह शैवधर्मावलम्बी-हो गया था। जिस प्रकार उत्तरी भारत में बड़े-बड़े कवि इस धर्म के उपासक थे। इन सबों के प्रभाव उनके अनुसार वेद और शैवों का प्रारम्भ दोनों सत्य है।

शैवमत में धीरे-धीरे तन्त्र-मन्त्र का प्रभाव अधिक बढ़ गया था। शैवमत का उपासक प्रायः तांत्रिक भी होते रहे हैं। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि शाक्त मत के फलस्वरूप शैवमत में मंत्र तन्त्रों का प्रवेश अधिक हो गया। शिव की पार्वती बड़े ही मधुर एवं उग्ररूप मानी जाती हैं। पार्वती को भवानी, उमा, चण्डी, काली, दुर्गा विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। अतः स्वाभाविक है कि शैवमत पर शाक्त मत का काफी प्रभाव है।

शैवमत का प्रचार-प्रसार भारत के सभी भागों है जिस प्रकार बंगाल में शैव और वैष्णव की प्रबलता है उसी प्रकार दक्षिण भारत में वैष्णव धर्म और शैवमत की अधिक प्रबलता है। दक्षिण भारत के बौद्ध मंदिरों एवं गुफाओं में भी शिव की मूर्ति मिलती है। वहां पर शिव अनेक रूप में विद्यमान है। दक्षिण भारत में शैवमत का काफी प्रचार था। कभी-कभी अन्य मतों से बड़ा ही संघर्ष हो जाता था। जैसे-जैन एवं शैवधर्म का झगड़ा बहुत ही प्रसिद्ध है। उत्तरभारत में भी शैवमत का प्रचार था पर दक्षिण भारत में था। काश्मीर में शैवमत काफी प्रचलित था। शैवमत के अनेक मंदिर काश्मीर में बने हैं। अमरनाथ का गुफा शिव से ही सम्बन्धित है